क्या मुद्रास्फीति के लिए कोई नया नॉर्मल है ?*

दुव्वुरी सुब्बाराव

भारत, वैश्विक वित्तीय संकट से तो अन्य सब देशों से पहले उबरा मगर मुद्रास्फीति ने हमें भी औरों से पहले ही जकड़ लिया। थोक मूल्य सूचकांक (डब्ल्यूपीआई) द्वारा मापे गए अनुसार 2009 के संकट में कुछ महीनों के लिए मुद्रास्फीति थोड़ी सी नकारात्मक हुई और उसके बाद तो तेज़ी से ऊपर उठने लगी और अप्रैल 2010 में 10.9 प्रतिशत के शीर्ष शिखर पर पहुंच गई। राजकोषीय वर्ष 2010-11 में औसत थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति 9.6 प्रतिशत थी। थोक मूल्य सूचकांक 2011-12 में 8.9 प्रतिशत और 2012-13 के शुरू के दस महीनों में 7.5 प्रतिशत था (चार्ट-1)।

न्यू नॉर्मल परिकल्पना

2. गत तीन वर्षों में इतनी अधिक मुद्रास्फीति होने के बावजूद रिज़र्व बैंक ने अपनी नीति समीक्षाओं में बराबर यह बात बनाए रखी है कि इसका उद्देश्य '.. मुद्रा स्फीति की अवधारणा को 4.0-4.5 प्रतिशत की रेंज में रखना है। यह 3.0 प्रतिशत मुद्रास्फीति के मध्यावधि लक्ष्य के समनुरूप है जो कि भारत के वैश्विक अर्थव्यवस्था में व्यापक एकीकरण के अनुरूप है।'

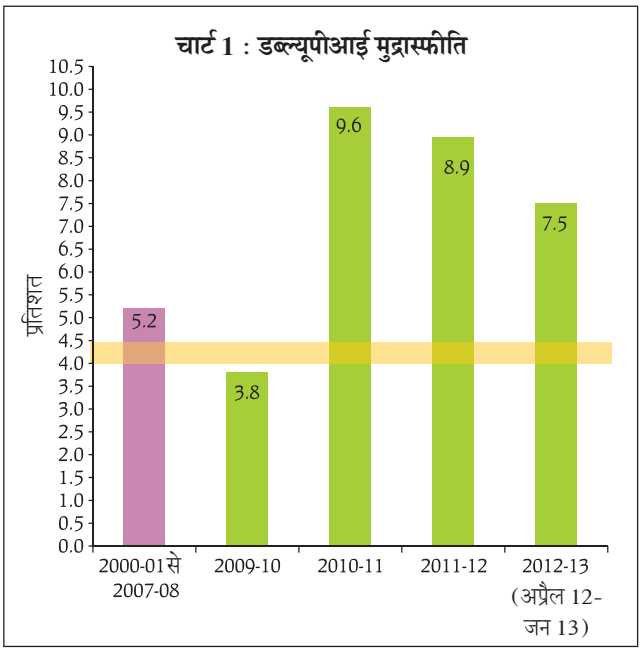

3. हाल के महीनों में कुछ विश्लेषकों ने मुद्रास्फीति की इस जिद्दी और निरंतर प्रवृत्ति को देखते हुए रिज़र्व बैंक के, मुद्रास्फीति के स्तर को नीचे लाने के संकल्प पर प्रश्न चिह्न उठाए हैं। उनकी सोच का मुख्य आधार यह है कि गत तीन वर्षों, जिनके लिए कि आंकड़े उपलब्ध हैं (फरवरी 2010-जनवरी 2013) में 8.8 प्रतिशत की औसत थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति, लेहमैन के ढहने से पहले के तीन वर्षों (सितंबर 2005- अगस्त 2008) की 6.0 प्रतिशत की औसत मुद्रास्फीति से काफी अधिक है; जिसका अर्थ यह है कि कई घरेलू और वैश्विक डिवेलपमैंट्स की वजह से भारत की मुद्रास्फीति में काफी चढ़ाव आया है। यह भी कहा जा रहा है कि जब तक रिज़र्व बैंक नए नॉर्मल को मान्यता नहीं देगा तब तक मौद्रिक नीति केलिब्रेशन दोषरहित नहीं हो सकता।

4. तथापि, रिज़र्व बैंक इस न्यू नॉर्मल के तर्क से सहमत नहीं है। असल में यह बौद्धिक प्रतिबद्धता ही है जिसने कि पिछले तीन वर्षों में मुद्रास्फीति पर लगाम लगाने के हमारे प्रयासों को मजबूत बनाए रखा और मुद्रास्फीति को दोहरे अंकों से, कम करके 7 प्रतिशत से भी नीचे ले आए। मेरे आज के व्याख्यान का केंद्र बिंदु 'न्यू नॉर्मल' की इस बहस पर रिज़र्व बैंक की स्थिति को प्रस्तुत करना है।

नए नॉर्मल के पक्ष में तर्क

5. इससे पहले कि मैं अपना पक्ष रखूं, मैं पहले संक्षेप में उन विभिन्न विश्लेषकों द्वारा दिए गए तर्कों का संक्षेपण प्रस्तुत करूंगा जो कि नए नॉर्मल का समर्थन करते हैं।

(i) मजदूरी-मूल्य चक्र, मुद्रास्फीति पथ का एक स्थायी आघात है।

6. नए नॉर्मल का पहला तर्क गत कुछ वर्षों में देहाती मजदूरी में तेज वृद्धि से उभरा है जिसने कि मजदूरी मूल्य चक्र चला दिया है। गत पांच वर्षों में नॉमिनल देहाती मजदूरी दुहरी अंक दरों से बढ़ी है। असल में इतनी तेजी से बढ़ी कि उच्च खुदरा मुद्रास्फीति के बावजूद रीयल मजदूरी भी गत तीन वर्षों में दुहरे अंकों के पास पहुंच गई है (तालिका-1)

* 8 मार्च 2013 को बैंकर्स क्लब, नई दिल्ली में, भारतीय रिज़र्व बैंक के गवर्नर, डॉ. दुव्वुरी सुब्बाराव द्वारा दिया गया अभिभाषण।

[1] पिछली बार भारत ने तीन लगातार वर्षों में 7.5 से ऊपर मुद्रास्फीति का अनुभव 1990-96 में किया था।

तालिका 1 : देहाती मजदूरी (वेतन) में वृद्धि

वर्ष	नॉमिनल मजदूरी वृद्धि*	औसत सीपीआइ (आरएल) मुद्रास्फीति	रीयल मजदूरी वृद्धि
	(प्रतिशत)		
2007-08	8.9	7.2	1.5
2008-09	15.9	10.2	5.1
2009-10	18.0	13.8	3.8
2010-11	20.0	10.0	8.9
2011-12	19.9	8.3	10.6
2012-13 (अप्रैल-दिसं.)	18.1	9.4	8.0

* दैनिक मजदूरी दर, देहाती अकुशल मजदूर (पुरुष)
स्रोत : लेबर ब्यूरो, शिमला

7. अब तक देहाती मजदूरी का सबसे प्रबल ड्राइवर (चालक) सरकार के पुष्टिकारी एक्शन प्रोग्राम रहे हैं - अंतरण भुगतानों (सबसिडीज़) द्वारा तथा कल्याण कार्यक्रमों द्वारा - जिन्होंने वेज गुड्स की मांग को काफी बढ़ा दिया है और कम मजदूरी पर श्रमिकों की आपूर्ति को कम कर दिया है। दो अन्य कारकों ने भी मजदूरी-मूल्य चक्र को तेज़ किया है। पहले तो बड़े सरकारी रोजगार कार्यक्रमों ने न केवल मजदूरी को बढ़ाया बल्कि कृषि इनपुट मूल्यों में ऊपर की ओर दबाव डाला है जिससे फूड की कीमतें बढ़ी हैं। दूसरे, मजदूरी बढ़ने के साथ-साथ उत्पादकता में तदनुरूपी वृद्धि नहीं हुई जो कि मुद्रास्फीति के लिए एक भोजन (रेसिपी) है।

8. इससे 'न्यू नॉर्मल' का जो तर्क उभरता है वह यह है कि इन पात्रता कार्यक्रमों को उलटना राजनीतिक दृष्टि से कठिन होगा, ये तो बने ही रहेंगे और यह भी कि इन मजदूरी मूल्य दबावों को एक संरचनात्मक फीचर के रूप में भारत को स्वीकारना ही होगा और अपने मुद्रास्फीति लक्ष्य को तदनुसार समायोजित करना होगा।

(ii) पण्य मूल्य दबाव तो बने ही रहेंगे

9. उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की संकट से धीमी रिकवरी तथा परिणामस्वरूप कम मांग को देखते हुए यह प्रत्याशा थी कि पण्यों, खास तौर पर कच्चे तेल की वैश्विक कीमतें नरम रहेंगी। मगर हुआ यह कि संकट पूर्व की अवधि (संकट के तेज़ उतार चढ़ाव वाले दो वर्षों को छोड़कर) की तुलना में पण्यों की कीमतें बढ़ गईं और उसी स्तर पर बनी हुई हैं।

10. यह तर्क दिया गया है कि कई शक्तियां जो मध्यावधि में भी जाएंगी वे पण्यों की कीमतों को पुष्ट बनाने में कार्य करेंगी।

चार्ट 2 : (भारतीय बास्केट) कच्चे तेल की औसत कीमतें

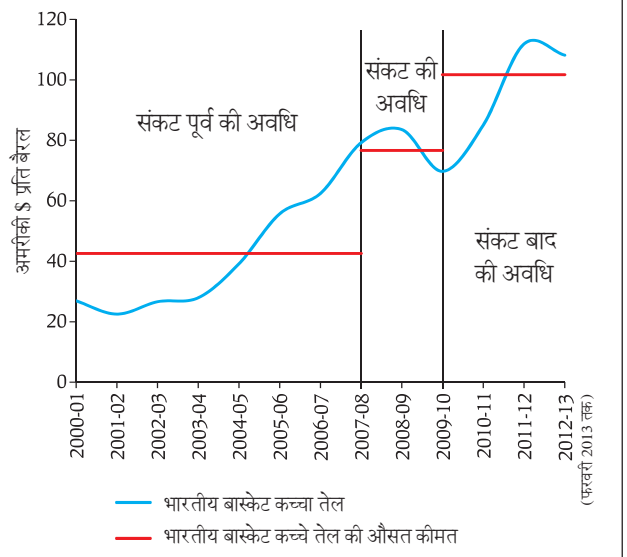

स्रोत : आइएमएफ तथा पीपीएसी, पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय

प्रथमतः, तेल उत्पादक, विपरीत आश्वासनों के बावजूद कच्चे तेल के लिए न्यूनतम फ्लोर मूल्य सुनिश्चित करने के लिए आपूर्ति को केलिब्रेट करेंगे। दूसरे 'पण्यों का वित्तीयकरण' एक ऐसा जुमला, जो बुनियाद से असंबंधित,पण्यों की कीमतों के नुकीलेपन को, व्याख्ययित करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है, और जिसने उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में अभूतपूर्व मात्रात्मक ईज़िंग (क्यूई) द्वारा प्रदत्त वैश्विक लिक्विडिटी के निर्माण के दौरान बड़ी मशहूरी पाई, अब यहां भी टिक गया है। यह वित्तीय बाजार स्थिति और रीयल अर्थव्यवस्था के बीच एक विषमता पैदा करता है और यह वैश्विक अर्थव्यवस्था की एक संरचनात्मक विशेषता बनी रहेगी। उच्च पण्य कीमतों के समर्थन में एक तीसरा तर्क दीर्घावधि फंडामेंटल्ज़ के आधार पर बनाया जाता है। यह कई तत्वों से बना है : विश्व की जनसंख्या जो 2012 की सात बिलियन से 2050 में 9 बिलियन से भी ऊपर पहुंच जाएगी उच्चतर प्रति व्यक्ति ऊर्जा खपत, क्योंकि उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाएं जीडीपी स्तरों को छू लेंगी और उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की रिकवरी हो जाएगी और, यह सामान्य स्तरों तक पहुंच जाएगी।

11. इस संदर्भ में नए नॉर्मल का तर्क है कि या तो वास्तविक आयातों अथवा अधिकांशतः आयात समानता मूल्यन के कारण, ये वैश्विक मूल्य दबाव, भारत तक भी पहुंच जाएंगे और मुद्रास्फीति दबावों को और बढ़ाएंगे।

(iii) ग्रेट मॉडरेशन का सकारात्मक आपूर्ति आघात अब समाप्त हो चुका है

12. संकट पूर्व के वर्षों में ग्रेट मॉडरेशन के दौरान विश्व ने, असाधारण मूल्य स्थिरता की विस्तारित अवधि का आनंद उठाया है, जैसा कि हम जानते हैं। यह अधिकांशतः उभरती अर्थव्यवस्थाओं, खासकर चीन, के वैश्विक अर्थव्यवस्था में एकीकरण का सौम्य प्रभाव था। 1980 और 1990 के बीच अकेले चीन ने ही वैश्विक लेबर पूल में एक बिलियन से अधिक लोगों को जोड़ा। इससे वैश्विक उत्पादन तो बढ़ा लेकिन मांग में तदनुरूपी वृद्धि नहीं हुई जिससे कीमतें नीची बनी रहीं।

13. यह भी तर्क दिया जा रहा है कि विश्व, संकट के बाद, ग्रेट मॉडरेशन की स्थिति में नहीं लौटेगा। जैसे-जैसे चीन बाह्य मांग से घरेलू मांग के अपने पुनर्संतुलन को आगे बढ़ा रहा है वैसे-वैसे वह वैश्विक अर्थव्यवस्था, चीन से होने वाली कम लागत की आपूर्तियों से संकुचन देखेगी, जिससे कीमतें बढ़ेंगी अर्थात् सस्ते आयात का युग सदा-सदा के लिए खत्म हो जाएगा।

14. इस संदर्भ में नए नॉर्मल का तर्क इस प्रकार है। चूंकि चीन से आया सकारात्मक आपूर्ति आघात समाप्त हो गया है,इसलिए वैश्विक मुद्रास्फीति, रिकवरी पूरी होने के बाद, एक नए नॉर्मल में शिफ्ट कर जाएगी; रिज़र्व बैंक का विवक्षित फार्मूला यह है कि मुद्रास्फीति के अपने कंफर्ट स्तर को, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की औसत मुद्रास्फीति दर से 2-3 प्रतिशतता बिंदु ऊपर रखा जाए और साथ ही मध्यावधि में वैश्विक औसत मुद्रास्फीति में कन्वर्ज करने का भी लक्ष्य रखा गया। यदि ऐसा है तो इसे मुद्रास्फीति के नए वैश्विक नॉर्मल को मान्यता देनी होगी और तद्नुसार घरेलू मुद्रास्फीति के लिए अपने कम्फर्ट (सहूलियत) स्तर को पुनः केलीब्रेट करना होगा।

(iv) उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मात्रात्मक ईज़िंग उच्चतर मुद्रास्फीति की ओर ले जाएगी

15. उन्नत अर्थव्यवस्था के केंद्रीय बैंकों ने मात्रात्मक ईजिंग के अभूतपूर्व स्तरों का सहारा लेकर असामान्य नीति शक्ति के साथ वैश्विक वित्तीय संकट का मुकाबला किया है। यह तर्क दिया जा रहा है कि जब ये अर्थव्यवस्थाएं एक इक्विलिब्रियम स्तर तक रिकवरी कर लेंगी, तो यह अतिरेक, उच्चतर और टिकी रहने वाली मुद्रास्फीति के जरिए उनकी अर्थव्यवस्थाओं का पीछा करेगा।

16. क्या उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के पास उन मुद्रा स्फीति दबावों से लड़ने का कोई इन्सेंटिव होगा? संभवतः नहीं। उनके असाधारण राजकोषीय दबावों तथा सरकारी कर्ज़ सर्विसिंग की परिणामकारक भारी बाध्यताओं को देखते हुए असल में वे इसे ही सुविधाजनक समझेंगे। वे कर्ज़ से बाहर निकलने के लिए इन्फ्लेट करेंगे।

17. इस वैश्विक परिदृश्य का भारतीय आयाम इस प्रकार है। यदि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मुद्रास्फीति का उच्चस्तर बने रहना अपरिहार्य है तो भारत को इसे मानना चाहिए और मुद्रास्फीति के अपने लक्ष्य के समनुरूप अपनी नीति कैल्कुलस में, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की औसत मुद्रास्फीति से कुछ प्रतिशतता बिंदु ऊपर रखना चाहिए।

(v) भारत को फिलिप्स कर्व द्वारा सुझाए अनुसार सकारात्मक संबंध का लाभ उठाना चाहिए

18. बृहद् अर्थशास्त्रियों ने फिलिप्स कर्व संबंध द्वारा सामने रखी गई दुविधा से खुद को काफी दो-चार किया है। फिलिप्स कर्व केवल मुद्रास्फीति और विकास के बीच अनुभवजन्य सकारात्मक संबंध हैं (अथवा मुद्रास्फीति और बेरोज़गारी के बीच प्रतिकूल संबंध है)। बाद में हुए आर्थिक अनुसंधानों के बावजूद जिन में से कुछ को नोबेल पुरस्कार भी मिला है, जिसमें बताया गया है कि ''फिलिप्स कर्व ट्रेड-आफ'' का कोई सैद्धांतिक आधार नहीं है, एक ऐसा वैचारिक स्कूल भी है कि थोड़ी सी अधिक मुद्रास्फीति को सहन करके उच्च वृद्धि (अथवा कम बेरोजगारी) को प्राप्त करने के लिए मौद्रिक नीति इस 'मुद्रास्फीति वृद्धि ट्रेड ऑफ' का लाभ उठा सकती है।

19. जो लोग ''फिलिप्स कर्व ट्रेड ऑफ'' में विश्वास करते हैं उनके लिए भारत एक अनुनेय मामला बन सकता है क्योंकि इसमें उच्च विकास प्राप्त करने के लिए थोड़ी मुद्रास्फीति अधिक मान ली गई है क्योंकि भारत के मामले में गरीबी घटाने पर उच्च वृद्धि का गुणक प्रभाव अधिक होगा परंतु क्या उच्च मुद्रास्फीति गरीब को नहीं सताएगी। विचारकों का तर्क है कि नहीं सताएगी। क्योंकि उच्च रीयल आय से क्रय शक्ति बढ़ेगी जो उच्च मुद्रास्फीति के प्रभाव को खत्म कर देगी।

20. यहां यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि ''नया नॉर्मल मुद्रास्फीति तर्क'', जो फिलिप्स कर्व से निकलता है एक महत्वपूर्ण ढंग से पहले के तर्कों से भिन्न है। पहले के तर्कों में अस्वैच्छिक आयाम है। भारत इन शक्तियों को प्रभावित

नहीं कर सकता। इसे मजबूरी में, इससे एडजस्ट करना होगा। इसकी तुलना में फिलिप्स कर्व के तर्क में, उच्च वृद्धि प्राप्त करने के लिए उच्चतर मुद्रा स्फीति को स्वीकार करना स्वैच्छिक नीति में शामिल है। अगर यह विकल्प चुनना है तो रिज़र्व बैंक को अपने मुद्रास्फीति के लक्ष्य को उच्चतर स्तर पर केलिब्रेट करना होगा।

(vi) वैश्विक अर्थव्यवस्था में भारत के एकीकरण के कारण पी.पी.पी. (क्रय शक्ति समानता) कनवर्जेंस का अर्थ है मुद्रास्फीति के लिए नए नॉर्मल को स्वीकार करना

21. यह तर्क ''बलासा सेम्युएल्सन प्रभाव'' पर आधारित है जो कहता है कि एक विकासशील अर्थव्यवस्था में एब्सोल्यूट मूल्य स्तर को विकसित अर्थव्यवस्थाओं के साथ कन्वर्ज होना चाहिए क्योंकि यह पी.पी.पी. केचअप के कारण, 'वैश्विक अर्थव्यवस्था में एकीकृत होता है। इस केचअप की प्रक्रिया में उत्पादकता स्तरों से पहले ही मजदूरी में वृद्धि होती है, खास तौर पर गैर व्यापार योग्य क्षेत्र में, जिससे मुद्रास्फीति होती है।

22. गत दस वर्षों में वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ भारत का एकीकरण उससे कहीं तेज़ गति से हुआ है जिसे हम स्वीकार करते हैं और अगले दस वर्षों में यह उससे कहीं तेज़ गति से होगा जितना कि हम यकीन कर रहे हैं। वर्ष 2011-12 के आर्थिक सर्वेक्षण में तर्क दिया गया है कि आगामी तीन वर्षों में भारत के लिए पीपीपी कन्वर्जेन्स की इस प्रक्रिया में, दो प्रतिशतता बिंदुओं की अतिरिक्त मुद्रास्फीति शामिल होगी और इसमें एक्सचेंज रेट का कोई समायोजन नहीं होगा, और यदि रुपए को ऊपर उठने की अनुमति दी गई तो यह 1.5 प्रतिशतता बिंदु होगी। तदनुसार मौद्रिक अधिकारियों के लिए परामर्श यह होगा कि इस नए नॉर्मल को मौन सहमति दें और पी.पी.पी. कैचअप की प्रक्रिया में तेजी लाने के लिए वृद्धि को समर्थन दें।

नए नॉर्मल पर यह बहस भारत के लिए अनन्य नहीं है

23. दिलचस्प बात यह है कि मुद्रास्फीति के लिए नए नॉर्मल पर यह बहस भारत के लिए अनन्य नहीं है। संकटोत्तर संदर्भ में कई देशों में भिन्न भिन्न रूप से यह बहस जारी है।

24. वर्ष 2000 में ही बरनान्के[2] ने तर्क दिया था कि बैंक आफ जापान की मौद्रिक नीति ने किनीजिअन चल निधि ट्रैप को हिट किया है और बैंक ऑफ जापान को अपस्फीति शक्तियों को परास्त करने के लिए अपनी ''मुद्रास्फीति सहनशीलता'' को 3 से 4 प्रतिशत तक बढ़ाना पड़ेगा।

25. जैसे ही विश्व वित्तीय संकट शुरु हुआ बरनान्के को इसी तरह की सलाह का खुद सामना करना पड़ा। जब ब्लैन्कार्ड तथा अन्य[3] और क्रैगमैन[4] ने अलग-अलग तथा स्वतंत्र रूप से तर्क दिया कि फेडरल रिज़र्व को अपना मुद्रास्फीति लक्ष्य 2 प्रतिशत से 4 प्रतिशत कर देना चाहिए ताकि यह खुद को पारंपरिक मौद्रिक ईज़िंग के लिए अधिक बड़ा हैडरूम दे सके और परिणामस्वरूप अपारंपरिक मौद्रिक ईजिंग का सहारा लेने से बच सके या कम से कम उसमें देरी तो कर ही सके। यह प्रदर्शित करके कि चार प्रतिशत के मुद्रास्फीति लक्ष्य पर 'फैड फंड्स रेट' के शून्य को छूने की संभावना एक प्रतिशत से भी कम है, मात्रात्मक आकलनों में इस तर्क को और भी मजबूत किया है। तथापि फैड ने उच्चतर मुद्रास्फीति लक्ष्य की इस मांग का प्रतिरोध किया है, यह तर्क करके कि मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं को कम करने से अर्थव्यवस्था उच्चतर मुद्रास्फीति के जोखिम के घेरे में आ जाएगी।[5]

26. हाल ही में उच्चतर मुद्रास्फीति लक्ष्य के संबंध में एक बहस काफी 'हाइ प्रोफाइल बहस' के रूप में उभरी। आगामी सरकार के वृद्धि प्रदान करने के चुनावी वायदे के अनुरूप बैंक ऑफ जापान ने एक प्रतिशत मुद्रास्फीति के ध्येय को बढ़ा कर 2 प्रतिशत कर दिया जिसे वह असीमित बांड खरीद के जरिए प्राप्त करने की उम्मीद रखती है।

27. यूके में इस बात पर वैचारिक संघर्ष चल रहा है कि धसकती अर्थव्यवस्था को कैसे पुनर्जीवित किया जाए। सरकार ने मजबूती से एक राजकोषीय समेकन योजना अपनाई लेकिन प्राइवेट सेक्टर इसे अपनाने में ढिलाई दिखा रहा है और मांग अभी पुनर्जीवित होनी बाकी है। इसलिए अर्थव्यवस्था को

[2] बेन एस बर्नान्के, जापानी मौद्रिक नीति : ए केस ऑफ सेल्फ इन्ड्यूस्ड पेरालिसिस। इन्स्टीट्यूट फॉर इन्टरनेशनल, इकॉनोमिक्स विशेष रिपोर्ट, 13 सितंबर 2000

[3] ओलिवियर ब्लैन्कार्ड, जिओवानी डेल 'एरिकिया तथा पाओलो माडरो,' 'रीथिंकिंग मैक्रोइकॉनोमिक पॉलिसी', आइएम स्टाफ पोज़ीशन नोट, 12 फरवरी 2010

[4] पॉल क्रैगमैन, ''अर्थ टू बेन बर्नांके : चेयरमैन बर्नान्के को प्रोफेसर बर्नान्के की सुननी चाहिए'', न्यूयॉर्क टाइम्स, 24 अगस्त 2012

[5] एथर एल जॉर्ज, द यू एस इकोनोमी एण्ड मोनीटरी पॉलिसी' फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ कैन्सास सिटी

उत्प्रेरित करने का बोझ बैंक ऑफ इंग्लैंड, एक मुद्रास्फीति लक्ष्यकर्ता, पर आ गया है जिसे कि 2012 के मध्य तक लगातार कई महीने मुद्रास्फीति के लक्ष्य को निरंतर बढ़ाना पड़ा है।

28. इस नीति परिप्रेक्ष्य ने, यूके में एक नई बहस छेड़ दी है कि इस सख्त मंदी के आलोक में क्या ''मुद्रास्फीति लक्ष्यन'' एक उपयुक्त नीतिगत कदम है। मार्क कार्नी, जो जल्दी ही बैंक ऑफ इंग्लैंड के गवर्नर बनने वाले हैं, ने एक विकल्प का सुझाव दिया है कि केंद्रीय बैंक मुद्रास्फीति की बजाय नोमिनल जीडीपी के लक्ष्यन पर विचार कर सकते हैं। मौद्रिक नीति कितनी देर तक आसान बनी रहेगी, इस बारे में अनिश्चितता को कम करने के द्वारा ''नॉमिनल जीडीपी लक्ष्यन'' केंद्रीय बैंक को, विकास को आगे बढ़ाने के लिए एक सुनम्य मौद्रिक नजरिया बनाए रखने में मदद करता है चाहे मुद्रास्फीति अपने सहूलियत स्तर से अधिक ही क्यों ना हो मगर इसकी भी अपनी एक कीमत है। इससे भावी मुद्रास्फीति के बारे में अनिश्चितता बढ़ जाती है और यह लक्ष्यित मुद्रास्फीति के गिर्द मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं को उनके लंगर से संभावित रूप से खोल भी सकती है।

29. हालांकि मुद्रास्फीति हेतु इस नए नॉर्मल के बारे में ये बहसें पूरे विश्व में आम हो चली हैं। तथापि भारत और उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के बीच समानताएं नहीं ढूंढी जानी चाहिए। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में चिंता इस बात की है कि नीतिगत ब्याज दरें शून्य होने के बाद भी मौद्रिक ईज़िंग की अवस्थिति को कैसे बनाए रखा जा सके ताकि रोजगार और उत्पादन में होनेवाली क्षति को न्यूनतम किया जा सके। इसके विपरीत सामान्यतः उभरती अर्थव्यवस्थाओं तथा विशेषकर भारत में, चिंता, गरीबी कम करने की ओर लक्ष्यित, उच्च वृद्धि करने की ओर है, चाहे इसके लिए मुद्रास्फीति अधिक क्यों न हो, मगर बहुत अधिक नहीं। मुद्रा स्फीति के लिए उच्चतर नॉर्मल के पक्ष और विपक्ष में, तर्कों के मूल्यांकन के समय, इस बड़ी भिन्नता को ध्यान में रखा जाना जरूरी है।

इस बात को मानना क्यों जरूरी है कि मुद्रास्फीति हेतु नया नॉर्मल है?

30. यह इसलिए आवश्यक है कि 'नॉर्मल मुद्रास्फीति' में 'ऊर्ध्वात्मक दीर्घावधि संरचनात्मक शिफ्ट' को न मानने से त्रुटिपूर्ण मौद्रिक नीति अवस्थिति पैदा हो सकती है, जिसकी संभवतः काफी बृहदार्थिक कीमतें चुकानी पड़ सकती हैं।

31. इसे सांख्यिकीय विश्लेषण के टाइप-I तथा टाइप-II त्रुटियों के उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। अगर वास्तव में कोई नया नॉर्मल है और यह मान्यता प्राप्त नहीं है तो उससे मौद्रिक नीति ओवरटाइट हो सकती है, जो टाइप II प्रकार की त्रुटि है। मगर टाइप I प्रकार की भी त्रुटि हो सकती है, यदि नया नॉर्मल गलती से मान्यता प्राप्त है और मौद्रिक स्थितियों को काफी लंबे समय तक सुनम्य (अकोमोडेटिव) रखा जाता है। जिसके परिणामस्वरूप मुद्रास्फीति ऊंची हो सकती है। सिद्धांत हमें यह भी बताते हैं कि यदि एक प्रकार की त्रुटि को न्यूनतम करने के प्रयास किए जाएं तो इसके परिणामस्वरूप दूसरे प्रकार की त्रुटि अधिकतम हो सकती है, तो फिर संतुलन कहां होना चाहिए। अगर तार्किक रूप से मुद्रास्फीति के लिए कोई नया नॉर्मल है भी तो क्या यह अधिक समझदारी का काम नहीं होगा कि सतर्कता के पक्ष की ओर त्रुटि की जाए? और विकास की क्षति के संदर्भ में मुद्रा स्फीति के मोर्चे पर उस समझदारी की आखिर क्या कीमत चुकानी पड़ेगी?

32. ''वृद्धि मुद्रास्फीति-संतुलन'' के प्रबंधन में, केंद्रीय बैंकों को एक जटिल नीतिगत विकल्प का सामना करना पड़ता है। अनुभव दर्शाता है कि नीतिगत गलतियों को शीघ्र आसानी से नहीं उलटा जा सकता, और इसके लिए जनकल्याण की क्षति के रूप में भारी कीमत चुकानी पड़ती है। इसी के साथ नीतिगत गलतियों की संभावना काफी अधिक होती है, क्योंकि तत्काल, अर्थव्यवस्था की संभावित वृद्धि दर का सही अनुमान लगाना बहुत कठिन होता है।

33. गत पचास वर्षों के आर्थिक इतिहास, खासकर अमरीका में, कई ऐसी घटनाएं हुई हैं जहां केंद्रीय बैंकों पर भारी गलतियां करने के आरोप लगे हैं। इसका सर्वोत्तम उदाहरण है 1980 के दशक के शुरुआती वर्षों की ''वोकरअवस्फीति नीति''। उस समय के फैड चेयरमैन पॉल वोकर को अधिकांशतः, अमरीका में, मूल्य स्थिरता को वापस लाने का श्रेय दिया जाता है। परंतु बाद में इस बात पर सवाल उठे कि क्या इसके लिए बहुत बड़ी कीमत तो नहीं चुकाई गई। क्योंकि बाद में दो बार बड़ी मंदी आई और बेरोजगारी बढ़ी, तो क्या यू.एस.मुद्रास्फीति के लिए कोई नया ऊंचा नॉर्मल था, जिसे वोकर ने नहीं पहचाना? और अगर था तो पिछले दो दशकों के अमरीका के कम मुद्रास्फीति अनुभव से, इसका तालमेल कहां बैठता है? यह एक ऐसी बहस है जिसका अभी तक कोई हल नहीं निकला है।

34. अर्थव्यवस्था के मूलभूत आर्थिक परिवर्तनशील कारकों - संभावित वृद्धि दर, बेरोजगारी की प्राकृतिक दर तथा थ्रेशोल्ड मुद्रास्फीति की 'नॉर्मल वैल्यूज' के सही आकलन लेने की महत्ता को सही रूप से कैलीब्रेट करने के लिए दिसंबर 2012 में अमरीकी फेड की घोषणा के संदर्भ में, कि जब तक बेरोजगारी की दर 6.5 प्रतिशत से ऊपर बनी रहती है, वह अपने वर्तमान आसान मौद्रिक नीति स्टान्स को बनाए रखेगा, बशर्ते मुद्रास्फीति, लक्ष्य से थोड़ी बहुत ही ऊपर हो और दीर्घावधि मुद्रास्फीति प्रत्याशाएं लंगर में रहती हैं, नीति को रीइन्फोर्स किया गया। इससे यह सवाल खड़ा हुआ कि क्या फेड ने 6.5 प्रतिशत को बेरोजगारी हेतु नया नॉर्मल स्वीकार कर लिया है। इससे एक और भी महत्वपूर्ण सवाल उठ खड़ा हुआ कि क्या 6.5 प्रतिशत बेरोजगारी वस्तुतः एक कम आकलन है, जिस स्थिति में कि फेड को अपनी आसान अवस्थिति को काफी लंबे समय तक बनाए रखने का जोखिम उठाना पड़ेगा; जिससे कि मुद्रास्फीति और भड़केगी।

नया नॉर्मल-प्रति तर्क

35. अब मैं आपके समक्ष नए नॉर्मल के प्रत्येक तर्क पर, रिज़र्व बैंक के आकलन और स्थिति को रखूंगा जिनका संक्षेपण पहले किया गया है।

(i) मजदूरी मूल्य चक्र अंतहीन समय तक नहीं बनाए रखा जा सकता

36. मजदूरी मूल्य चक्र तर्क पर हमारी प्रतिक्रिया का मुख्य बल इस बात पर है कि यदि समावेशित वृद्धि नीतियां, उदार राजकोष एन्टाइटलमेन्ट्स तथा ऊंची मुद्रास्फीति प्रत्याशाएं - जो मुख्यतः खाद्य मुद्रास्फीति के कारण होती हैं, - एक मजदूरी मूल्य स्पाइरल छेड़ भी दें तो भी किसी अकोमोडेटिव मौद्रिक नीति के अभाव में इसे बनाए नहीं रखा जा सकता। यह स्वीकारने योग्य है कि उत्पादकता वृद्धि के साथ न आए मजदूरी दबाव, मांग आघातों के रूप में शुरू होते हैं मगर शीघ्र रूपान्तरित हो जाते हैं और अधिकांशतः आपूर्ति आघातों जैसे कार्य करते हैं ।

37. किसी भी अन्य आपूर्ति आघात की भांति, बाहर से थोपी गई उच्च मजदूरी, प्रथम दौर में तो मुद्रास्फीतिकारक हो सकती है, मगर श्रमिक की मोलतोल की शक्ति तो समय के साथ क्षरित हो जाएगी और मजदूरी को उत्पादकता स्तरों की पंक्ति तक लाने के लिए आवश्यक समायोजन किए जाने होंगे। ग्रामीण मजदूरी में हाल की उच्च वृद्धि, नयूनतम मजदूरी के साथ पकड़ को भी परिलक्षित करती है जो कि सरकार द्वारा आशयित एक आवश्यक समायोजन है। तथापि इस प्रारंभिक पकड़ (कैच अप) के बाद तदनुरूपी उत्पादकता वृद्धि के बिना, मजदूरी में वृद्धि को स्थायी नहीं बनाया जा सकता। यदि नहीं, तो कंपनियां, उच्चतर इनपुट कीमतों को उच्चतर आउटपुट कीमतों में रूपान्तरित करने की अपनी शक्ति को शनैः शनैःखो देंगी और परिणामस्वरूप मजदूरी दबावों में करेक्शन करनी पड़ेगी।

38. इसके अतिरिक्त हमें यह भी अवश्य मान लेना चाहिए कि सरकार के पास इस स्तर पर इनटाइटलमेन्ट्स और कल्याण कार्यक्रमों को जारी रखने की राजकोषीय क्षमता नहीं है। सरकार की राजकोषीय जिम्मेदारी मजदूरी मूल्य चक्र पर, 'स्वयं सीमित- अंकुश' लगाने का कार्य करेगी।

(ii) पण्य मूल्य आघातों के बने रहने की संभावना नहीं है

39. हालांकि वैश्विक पण्य मूल्यों पर निरंतर पड़ रहे ऊर्ध्वात्मक दबाव के पक्ष में तर्क बहुत विवशकारी (कम्पेलिंग) हैं फिर भी इसके विपरीत कुछ साखवाले तत्व भी हैं जो कि आगे बढ़ रहे वैकल्पिक परिदृश्य से उभरे हैं। वैश्विक ऊर्जा परिदृश्य तीन आयामों से परिवर्तित होगा - दक्षता, मांग और आपूर्ति ।

40. दक्षता मोर्चे पर, विनियामक और प्रतियोगितात्मक दबाव यह सुनिश्चित करेंगे कि ऊर्जा एफिशिएन्सी से लाभ मिलते रहें और वह भी काफी तेज गति से। मांग की दृष्टि से इन दक्षता लाभों का प्रभाव, उभरती अर्थव्यवस्थाओं पर अधिक होगा; इस अर्थ में कि उनकी जीडीपी वृद्धि की ऊर्जा इन्टेन्सिटी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में कम होगी जबकि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के जीडीपी के स्तर समान थे। असल में चीन, 2020 तक, कम ऊर्जा इन्टेन्सिव विकास की ओर जाने के लिए प्रोजेक्टिड है।

41. आपूर्ति की दृष्टि से शेल क्रांति से, पहले गैस के लिए और फिर तेल के लिए 2030 तक, वैश्विक ऊर्जा आपूर्ति में वृद्धि के लगभग पांचवें हिस्से का अंशदान देने की आशा है। लगभग इसी तरह का सकारात्मक योगदान ऊर्जा के नवीकरण योग्य स्त्रोतों से भी मिलने की आशा है जो 2030 तक तिगुने हो जाएंगे। बढ़ते घरेलू उत्पादन तथा फ्लैट खपत से, अमरीका के, 2030 तक ऊर्जा में आत्मनिर्भर होने की उम्मीद है। ईराक से आपूर्ति धीरे-धीरे बढ़ने की आशा है और 2030 तक यह रूस को भी पार कर जाएगा और विश्व का दूसरा सबसे बड़ा तेल निर्यातक बन जाएगा।

42. और इन सबसे बढ़कर, अनुभव से मिले पाठ लगभग एक सदी से, पण्य मूल्य 'मीन रिवर्शन' (औसत प्रत्यावर्तन) के प्रवण (प्रोन) हो गए हैं, कोई कारण नहीं कि इस बार ऐसा न हो।

43. इसमें भी कोई शक नहीं कि ऊर्जा फ्रंट पर मिले लाभ, मुद्रास्फीति फ्रंट में तभी परिवर्तित होंगे जब अन्य नीतियों को समझदारपूर्ण ढंग से प्रबंधित किया जाय। खास तौर से औद्योगीकरण और शहरीकरण से भूमि की मांग को, जैव ईंधन उत्पादन पर ह्रासकारी प्रभाव डालने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। इसी के साथ, कृषि उत्पादकता को भी बढ़ाने की जरूरत है ताकि बढ़ती आबादी के लिए खाने का इंतजाम किया जाय, चाहे कुछ जमीन जैव ईंधन की खेती के लिए भी क्यूं न अलग रख दी जाए।

44. रिज़र्व बैंक के तर्क का बल इस बात पर है कि वैश्विक ऊर्जा परिदृश्य हेतु वर्तमान तथा प्रक्षेपित प्रवृत्तियां भारत की नॉर्मल मुद्रास्फीति बढ़ाने का कोई विश्वासोत्पादक मामला प्रदान नहीं करती।

(iii) वैश्विक पुनर्संतुलन हितैषी मुद्रास्फीति सुनिश्चित करेगा

45. न्यू नॉर्मल तर्क, जिसका कि मैंने पहले उल्लेख किया है वह यह है कि वैश्विक कीमतों पर नीचे की ओर दबाव बनाने की चीन की सामर्थ्य कम हो जाएगी। यह होगी तो सही, मगर धीरे-धीरे चीन की अर्थव्यवस्था के आकार को देखते हुए यह अगले दशक तक विश्व का सस्ता निर्माता बना रहेगा और वैश्विक मुद्रास्फीति को अंकुश में रखेगा। और यदि चीन वैल्यू चेन में ऊपर भी चला जाता है तो भी इसके द्वारा खाली की गई जगह को, उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में से कोई और ले लेगा। इस सबका यही अर्थ है कि वैश्विक वृद्धि और प्रतियोगितात्मक दबावों के ये बहुत से खंबे, यह सुनिश्चित करेंगे कि कम से कम अगले दशक तक तो वैश्विक मुद्रास्फीति, सौम्य ही बनी रहेगी। यह तर्क कि भारत को अपनी मुद्रास्फीति उच्चतर रखनी चाहिए क्योंकि वैश्विक मुद्रास्फीति ऊंची होनेवाली है, अपना बल इसलिए खो देता है कि वास्तव में उच्च वैश्विक मुद्रास्फीति कोई विश्वसनीय खतरा नहीं है।

(iv) क्यूई - मध्यावधि में वैश्विक मुद्रास्फीति का कोई खतरा नहीं

46. अब मैं उस तर्क की ओर आता हूं कि उन्नत अर्थव्यवस्थाएं क्यूई (क्वान्टिटेटिव ईज़िंग) की वजह से उच्च मुद्रास्फीति से ग्रस्त हैं। एक दृष्टिकोण यह है कि यह अतिशयोक्ति है। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंक, खासकर अमरीकी फेड ने बारबार कहा है कि उनके पास गैर मौद्रिक तरीके से क्यूई को खोलने (अनवाइन्ड) की सुविचारित योजनाएं विद्यमान हैं। साथ ही यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में दीर्घावधि मुद्रास्फीति प्रत्याशाएं, मूल्य स्थिरता के बारे में किसी खतरे को इंगित नहीं करती।

47. महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि किसी प्रजातान्त्रिक सरकार की चुनावी संभावनाओं को, बढ़ती कीमतों से ज्यादा और कोई चोट नहीं पहुंचाता। अतः राजनैतिक अर्थव्यवस्थाओं को, मजबूरियां, हमेशा सुनिश्चित करेंगी कि, वे अपने कर्ज और मुद्रास्फीति के बीच तालमेल बनाए रखें।

(v) फिलिप्स कर्व संबंध हमें कोई वास्तविक नीतिगत विकल्प प्रदान नहीं करती

48. 1990 से अब तक हुए अनुभव बतलाते हैं कि फिलिप्स कर्व द्वारा सुझाया गया 'सेक्यूलर वृद्धि मुद्रास्फीति ट्रेड ऑफ', मुद्रास्फीति के सभी स्तरों पर खरा नहीं उतरता। वास्तव में यह संबंध 'नॉन लीनियर' तथा 'उलटवां' (रिवर्सिबल) है। मुद्रास्फीति का एक 'थ्रेशोल्ड स्तर' होता है जिसके नीचे 'वृद्धि मुद्रास्फीति' 'थ्रेशोल्ड' से ऊपर होती है, तो यह निश्चित ही वृद्धि के लिए हानिकर होती है क्योंकि ऊंची मुद्रास्फीति, वृद्धि दर को बढ़ाती नहीं बल्कि असल में घटाती है।

49. मोहोन्ती तथा अन्य (2011)[6] ने अनुमान लगाया है कि भारत की थ्रेशोल्ड मुद्रास्फीति 4.0 प्रतिशत से 5.5 प्रतिशत की रेंज में है। इसी विधि का प्रयोग करके, अद्यतन अनुमान, इसे 4.4 प्रतिशत से 5.7 प्रतिशत के बीच रख रहे हैं, जिसका मध्य बिन्दु 5.0 प्रतिशत पर आता है। यद्यपि एक अनुमानित थ्रेशोल्ड मुद्रास्फीति दर, किसी केंद्रीय बैंक के लिए, इष्टतम मुद्रास्फीति लक्ष्य नहीं होना चाहिए फिर भी यह 'नॉर्मल मुद्रास्फीति' के, कैलिब्रेशन (अंशांकन) के लिए, एक संदर्भ बिंदु तो प्रदान करता ही है। निष्कर्ष यह है कि अनुभवजन्य अनुसंधान, एक 'नए नॉर्मल' को समर्थन प्रदान नहीं करता है।

---

[6] दीपक मोहन्ती, ए.बी.चक्रवर्ती, अभिमान दास तथा जायस जॉन, 'इन्फ्लेशन थ्रेशोल्ड इन इंडिया : इन एम्पिरिकल इन्वेस्टीगेशन डब्ल्यू पीएस (डीईजीआरः 18/2011)

(vi) पीपीपी अभिमुखता (कन्वरजेंस) के कारण नया नॉर्मल अपरिहार्य नहीं है

50. सभी अनुभवजन्य तर्कों के अलावा, नए नॉर्मल की परिकल्पना के खिलाफ, एक महत्वपूर्ण अवधारणात्मक तर्क भी है। जैसे-जैसे आगामी दशक में भारत का एकीकरण विश्व के साथ तेज़ी पकड़ेगा वैसे ही यह भी आवश्यक होगा कि हमारी मुद्रास्फीति दरें वैश्विक मुद्रास्फीति के अनुरूप हों। केवल मात्र घरेलू मोर्चे पर आधारित एक नया नॉर्मल, घरेलू और वैश्विक मुद्रास्फीति के बीच एक स्थायी फच्चर (वेज) बन जाएगा जिसका अर्थ होगा 'मुद्रा का निरंतर रीयल एप्रीसिएशन'। रीयल एप्रीसिएशन असंदिग्ध रूप से संकुचनकारी होता है और हमारी वृद्धि की आशाओं के खिलाफ लड़ता है। ऐसी अवधि में जबकि अर्थव्यवस्था का वैश्वीकरण हो रहा है, टिकाऊ वृद्धि के समर्थन के लिए, हमारी मुद्रास्फीति दर को वैश्विक मुद्रास्फीति दर के साथ कन्वर्ज करने की जरूरत है। मध्यावधि मुद्रास्फीति लक्ष्य को वैश्विक मुद्रास्फीति से कैलीब्रेट करने की रिज़र्व बैंक की नीति के पीछे यही तर्क है।

51. पीपीपी कन्वर्जेन्स तर्क पर आधारित नए नॉर्मल के तर्क को रेस्पॉन्ड करने के लिए, मेरे लिए, यह एक उपयुक्त परिप्रेक्ष्य है। इस पर हमारा विचार यह है कि पीपीपी अभिमुखता कोई नीति लक्ष्य नहीं हो सकती, और पीपीपी कैचअप को सहायता देने के लिए, उच्चतर मुद्रास्फीति को अपनाना, बेकार तथा अबचावकारी, दोनों होगा। भारत की प्रति व्यक्ति आय बढ़ने के साथ-साथ पीपीपी अभिमुखता स्वतः ही होती जाएगी। हमें यह सुनिश्चित करने की जरूरत है कि आय में वृद्धि के साथ उत्पादकता लाभ भी साथ चले, ताकि पीपीपी कैचअप की प्रक्रिया अमुद्रास्फीतिकारक हो।

52. यह विश्वास करने के लिए कोई निगमनिक कारण भी नहीं है कि वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण के कारण समायोजन का समूचा बोझ मूल्य विभेदक समापन के रास्ते ही आएगा। यदि समूचा नहीं तो बोझ का कुछ हिस्सा एक्सचेंज दर समायोजन के जरिए भी वहन किया जा सकता है। जैसा कि 1960 से शुरु हुआ जापान का अनुभव बताता है, जब मूल्य खाई को भरने के लिए येन लगभग 300 प्रतिशत ऊपर उठा था। मूल्य स्तरों और एक्सचेंज दरों के बीच समायोजन का बोझ कैसे बांटा जाना है यह देश की स्थितियों पर निर्भर करता है - खासतौर पर अर्थव्यवस्था की संरचनात्मक कठिनाइयों तथा बाजार की सख्तियों पर।

53. जब अर्थव्यवस्था का वैश्वीकरण हो रहा हो तो उस अवधि में टिकाऊ वृद्धि की सहायता के लिए हमारी मुद्रा स्फीति दर को वैश्विक मुद्रा स्फीति दर के साथ अभिमुख होने की जरूरत है। इस अभिमुखता का प्रबंधन हमें ओवरटाइम 'मुद्रास्फीति विभेदक' के केलिब्रेशन द्वारा करना है न कि मुद्रास्फीति हेतु नए नॉर्मल को मौन स्वीकृति देकर।

निष्कर्ष

54. निस्संदेह रूप से भारत में औसत मुद्रास्फीति दर बढ़ी है। उसके बावजूद न तो यह परिस्थिति आवश्यक बनाती है न ही रिज़र्व बैंक के लिए एक पर्याप्त शर्त रखती है कि वह अपने मुद्रास्फीति लक्ष्य को संशोधित करे। आवश्यक शर्त इसलिए नहीं क्योंकि जैसा कि पहले इंगित किया गया है हमारी मुद्रास्फीति, आपूर्तिगत कठिनाइयों के कारण है, जिन्हें उपयुक्त नीतियां बनाकर और उनका प्रभावी कार्यान्वयन करके दूर किया जा सकता है। मुद्रास्फीति के लिए नए नॉर्मल को स्वीकार करने का न तो कोई सैद्धांतिक अथवा अनुभवजन्य आधार है बल्कि इससे आपूर्तिगत कठिनाइयों के साथ डील करने में नीतिगत निष्क्रियता का नैतिक खतरा भी बन सकता है। पर्याप्त शर्त इसलिए भी नहीं क्योंकि यह सिद्ध करने के लिए कोई अनुभवजन्य साक्ष्य नहीं है कि उच्च वृद्धि के लाभ उच्चतर मुद्रास्फीति से जुड़ी कल्याण क्षतियों की कीमत से अधिक हैं।

55. टिकाऊ उच्च आर्थिक विकास के लिए हमारी सामूहिक राष्ट्रीय आशाओं की कुंजी है- कम तथा स्थिर मुद्रास्फीति। मूल्य स्थिरता के केवल ऐसे ही वातावरण के अंतर्गत निवेशक और उपभोक्ता सोच समझ कर निर्णय ले सकते हैं और विकास में योगदान दे सकते हैं। इस संबंध में रिज़र्व बैंक की जिम्मेदारी, मुद्रास्फीति संबंधी आशंसाओं पर अंकुश लगाना, तथा मूल्य स्थिरता को सुनिश्चित करना, न तो कोई सैद्धांतिक और न ही कोई अनुभवजन्य साक्ष्य है, जो विश्वसनीयता से यह कह सके, कि भारत में मुद्रास्फीति के लिए नए नॉर्मल हेतु मौन सम्मति देना आवश्यक है।